**माननीय पी.के. जैन, न्यायमूर्ति के समक्ष**

प्रदीप सिंह जस्सल @ बबला,-याचिकाकर्ता।

बनाम

भारत संघ और अन्य,-प्रतिवादी,

सी.आर.एल. डब्ल्यू.पी. 1995 का 216

18 जनवरी, 1996.

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 22 (5)-कोफेपोसा अधिनियम, 1974-धारा 3 (3)-निरोध- हिरासत में लेने के लिए प्राधिकारी द्वारा आश्रित दस्तावेजों को निरुद्ध द्वारा अपने प्रतिनिधित्व में प्रदान करने केअनुरोध के बावजूद वह दस्तावेज उसे प्रदान नहीं किये गये -माना जाता है, अब यह एक अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि प्रभावी प्रतिनिधित्व के लिए हिरासत में लिए गए व्यक्ति को हिरासत के आधार के बारे में जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है।

अभिनिर्धारित किया गया कि प्रभावी प्रतिनिधित्व करने के लिए, एक बंदी हिरासत के आधार से संबंधित जानकारी प्राप्त करने का हकदार है। जब हिरासत में लिए गए व्यक्ति को हिरासत के आधार की जानकारी दी जाती है, तो उसको प्रभावी प्रतिनिधित्व करने में सक्षम बनाने के लिए हिरासत के आधार में संदर्भित और भरोसा किए गए बयानों और दस्तावेजों की प्रतियां मांगने का हक है। श्रीमती इच्छु देवी चोरारिया बनाम भारत संघ और अन्य, ए.आई.आर. 1980 एस.सी. 1983. में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रश्न का आधिकारिक उत्तर दिया गया है।

(पैरा 11)

अभिनिर्धारित किया गया कि हिरासत में लेने वाला प्राधिकारी सभी दस्तावेजों की प्रतियां प्रदान करने के लिए बाध्य था क्योंकि याचिकाकर्ता ने अपने प्रतिनिधित्व में स्पष्ट रूप से इसका अनुरोध किया था। यह प्रश्न कि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा इन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था या नहीं या हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी के दृष्टिकोण से ये दस्तावेज़ प्रासंगिक थे या नहीं, अप्रासंगिक है। यह याचिकाकर्ता पर निर्भर करता है कि वह अपना मन बनाए कि वह प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करते समय उक्त दस्तावेजों से क्या मदद प्राप्त कर सकता है। अदालत या हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी को इस सवाल पर ध्यान नहीं देना चाहिए कि क्या वास्तव में ऐसे दस्तावेज़ प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करने के लिए हिरासत में लिए गए लोगों को कोई सामग्री प्रदान कर सकते हैं।इसलिए, अभ्यावेदन में मांगे गए दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्ति न करना, अपने आप में, आक्षेपित निरोध आदेश की जड़ पर प्रहार करने के लिए पर्याप्त है।

(पैरा 16)

याचिकाकर्ता की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता एच.एस. मत्तेवाल और सुखबीर सिंह, अधिवक्ता।

डी. डी. शर्मा. प्रतिवादी की ओर से अधिवक्ता, भारत संघ के अतिरिक्त स्थायी वकील।

**<u>निर्णय</u>**

पी.के. जैन, न्यायमूर्ति

(1) यह याचिका बंदी प्रदीप एस जस्सल उर्फ बबला पुत्र श्री प्रीतम सिंह जस्सल ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत हिरासत आदेश संख्या एफ नंबर, 673/15/95-सीयूएस, आठवीं, (अनुलग्नक पी.9) को रद्द करने के लिए दायर की है जिसे विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों की रोकथाम अधिनियम 1974 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 3 की उपधारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, भारत सरकार, वित्त मंत्रालय के संयुक्त सचिव द्वारा 7 दिसंबर, 1995 को पारित किया गया और उसे अवैध हिरासत से तुरंत रिहा किए जाने की प्रार्थना की।

(2) जिन आरोपों के आधार पर आक्षेपित आदेश पारित किया गया है, उन्हें हिरासत के आधार से एकत्र किया जा सकता है (अनुलग्नक पी.8)।

(3) प्रदीप कुमार, करमवंत सिंह और प्रदीप सिंह जस्सल उर्फ बबला (बंदी) के संबंध में कुछ गुप्त सूचना मिलने पर कि वे विदेश में रहने वाले भारतीय के निर्देश पर भारत में भुगतान के अवैध वितरण में लिप्त थे, 15 नवंबर, 1994

को कार नं PB-37-1213 को पंजाब पुलिस ने चहल नगर क्रॉसिंग, G.T होड, फगवाड़ा में रोक लिया। जिस कार में ये तीन लोग यात्रा कर रहे थे, उसमें 15 लाख रुपये पाए गए। प्रवर्तन निदेशालय के अधिकारियों को भी सूचित किया गया और उन्होंने इन तीनों व्यक्तियों के बयान दर्ज किए और यह पता चला कि ये व्यक्ति इस पैसे को नरवेल सिंह को जालंधर में उनके घर पर सौंपने के लिए ले जा रहे थे। नरवेल सिंह का परिसर, हाउस नं. 167-बी, चीमा नगर, जालंधर की तलाशी ली गई और भारतीय मुद्रा 6,20,000 रुपये की बरामद की गई और विदेश से प्राप्त निर्देशों पर भुगतान की प्राप्ति और वितरण दिखाने वाले दस्तावेज जब्त किए गए। बंदी-प्रदीप सिंह जस्सल की दुकान से कुछ दस्तावेज भी बरामद किए गए। अपने बयान में- बंदी प्रदीप सिंह जस्सल ने उक्त कार से उक्त बरामदगी को स्वीकार किया और खुलासा किया कि प्रेम कुमार निवासी नई दिल्ली द्वारा दुबई के कुलविंदर सिंह के निर्देश पर उन्हें 15 लाख रुपये दिए गए थे, जो उक्त कुलविंदर सिंह के निर्देश पर नरवेल सिंह को दिए गए थे। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि प्रेम कुमार से उन्हें उसी तरह 10 लाख रुपये प्राप्त हुए थे, जिसे उन्होंने पिछले सप्ताह नरवेल सिंह को दिया । उसने खुलासा किया कि दुबई के मनविंदर सिंह से मिले निर्देश पर वह पिछले दो महीनों से दिल्ली के प्रेम कुमार से पैसे इकट्ठा कर रहा था और इस तरह से उसने 1,10,00,000 रूपए जमा किए और प्रदीप कुमार को एक करोड़ रुपये और नरवेल सिंह को 10 लाख रुपये दिए उसे कमीशन के रूप में ऐसी राशि के प्रति एक लाख पर 800 रूपए मिले। उन्होंने यह भी खुलासा किया कि लुधियाना के करमवंत सिंह और उनके भतीजे जगजीत सिंह को इसी तरह कुलविंदर सिंह के निर्देश पर पैसे मिल रहे थे और करमवंत सिंह भी इस बंदी के साथ नरवेल सिंह को एक बार भुगतान करने के लिए गए थे, जब 10 लाख रुपये का भुगतान किया गया था। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि करमवंत सिंह भी उनके साथ दिल्ली गए और दो यात्राओं के दौरान क्रमशः 25 लाख और 15 लाख रुपये लाए। उन्होंने यह भी खुलासा किया कि दुबई के कुलविंदर सिंह के निर्देश पर वह परमजीत सिंह ( नरवेल सिंह के भतीजे) को 10 लाख रुपये देने गए थे क्योंकि नरवेल सिंह उस समय मौजूद नहीं थे। इसी तर्ज पर करमवंत सिंह, प्रदीप कुमार और नरवेल सिंह का भी बयान दर्ज किया गया था। नरवैल सिंह ने खुलासा किया कि उसका बहनोई (बहन का पति) मलपिंदर सिंह दुबई में रह रहा था और उसके निर्देश पर, उसे राशि मिल रही थी जो वह विभिन्न व्यक्तियों को वितरित कर रहा था और उसे फैक्स मशीन पर निर्देश मिल रहे थे और परमीत सिंह भी भारत में वितरित करने के लिए विभिन्न व्यक्तियों के माध्यम से नरवैल सिंह को भेजे जा रहे धन को वितरित करने के उद्देश्य से लगा हुआ था। उन दोनों को उनके खर्च के रूप में अलग-अलग 7,000 रूपए का भुगतान किया जा रहा था। नरवेल सिंह के अनुसार, उन्हें लगभग मालपिंदर सिंह और नरवेल सिंह के निर्देश पर 40,00,000 रुपये प्रति माह प्राप्त हुए थे। जून 1994 से 2.5 करोड़ रुपये जो उन्होंने उन व्यक्तियों के बीच वितरित किए थे जिनके रिश्तेदारों ने दुबई में मलपिंदर सिंह को विदेशी मुद्रा दी थी। प्रदीप सिंह जस्सल और नरवेल सिंह दोनों ने अपने बयानों में विभिन्न दस्तावेजों में दिखाई देने वाली प्रविष्टियों को समझाया जो उनके पास से जब्त किए गए थे जो उक्त हवाला लेनदेन का संकेत देते हैं।

(4) उपरोक्त आरोपों पर, भारत सरकार के संयुक्त सचिव, वित्त मंत्रालय, राजस्व विभाग, इस बात से संतुष्ट होने के बाद कि याचिकाकर्ता ने विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम 1973, के प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए विदेशी मुद्रा के अनधिकृत लेनदेन में खुद को शामिल किया है, विवादित निरोध आदेश पारित किया (अनुलग्नक पी.9)।

(5) याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित आधारों पर उक्त हिरासत आदेश की वैधता को चुनौती दी है: -

(i) कि याचिकाकर्ता को उसके अभ्यावेदन के बावजूद, हिरासत आदेश में जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था/उद्धृत किया गया था और विशेष रूप से याचिकाकर्ता द्वारा मांगे गए थे, उनकी प्रतियां प्रदान नहीं की गई हैं;

(ii) हिरासत के आधार पर सक्षम प्राधिकारी द्वारा जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था, वे सुपाठ्य नहीं थे और उनकी सुपाठ्य प्रतियां उसे प्रदान नहीं की गईं, जिसके कारण वह प्रभावी प्रतिनिधित्व नहीं कर सका;

(iii) सक्षम प्राधिकारी ने कुछ ऐसी सामग्री पर विचार किया है और उस पर भरोसा किया है जो अप्रासंगिक प्रकृति की थी।

उत्तरदाताओं को प्रस्ताव की सूचना दी गई थी।

(6) प्रतिवादी नंबर 1 की ओर से दायर अपने रिटर्न में, यह कहा गया है कि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा विवेकपूर्ण दिमाग के उचित उपयोग और उचित व्यक्तिपरक संतुष्टि के बाद हिरासत आदेश पारित किया गया है।

यह अदालत अपील की अदालत के रूप में नहीं बैठ सकती है और निरोध आदेश के गुण-दोषों पर गौर नहीं कर सकती । आगे कहा गया है कि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा भरोसा किए गए सभी दस्तावेज याचिकाकर्ता को प्रदान किए गए थे और 24 मार्च, 1995 के अभ्यावेदन पर विधिवत विचार किया गया और खारिज कर दिया गया और याचिकाकर्ता को तदनुसार सूचित किया गया। आगे यह कहा गया है कि दस्तावेजों में फैक्स संदेशों के माध्यम से विदेश से प्राप्त निर्देश शामिल थे और उन्हें बरामद और जब्त के रूप में आपूर्ति की गई है, और बरामद किए गए दस्तावेजों के अस्पष्ट हिस्से पर हिरासत आदेश पारित करते समय हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा विचार नहीं किया गया था। यह भी स्पष्ट किया गया है कि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा किसी भी अप्रासंगिक दस्तावेज़ पर विचार नहीं किया गया है।

(7) मैंने पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना है और रिकॉर्ड का अध्ययन किया है।

(8) याचिकाकर्ता की ओर से पेश होते हुए, श्री एच.एस. मत्तेवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता को हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा भरोसा किए गए/संदर्भित दस्तावेज उपलब्ध नहीं कराए गए थे और याचिकाकर्ता ने इसके लिए अनुरोध भी किया था, जिसके कारण वह प्रभावी कार्रवाई करने से वंचित रह गया। इस तर्क को विस्तृत करते हुए, विद्वान वकील ने बताया कि विभाग के अनुसार, याचिकाकर्ता की दुकान की तलाशी ली गई थी और कुछ दस्तावेज जब्त किए गए थे, लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि न तो दस्तावेजों की सूची और न ही उनकी प्रतियां उन्हें प्रदान की गई हैं। यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता ने इन दस्तावेजों के साथ-साथ प्रदीप कुमार के पासपोर्ट की प्रति के साथ-साथ मारुति कार के पंजीकरण प्रमाण पत्र की भी मांग की थी, जिसे अधिकारियों द्वारा जब्त कर लिया गया था, जिसने याचिकाकर्ता को प्रभावी प्रतिनिधित्व करने से रोक दिया था। और यह चूक अपने आप में भारत के संविधान के अनुच्छेद 22(5) का उल्लंघन करते हुए हिरासत आदेश की जड़ पर प्रहार करने के लिए पर्याप्त है। विद्वान वकील ने कुछ निर्णयों पर भरोसा किया है। हेमलता कांतिलाल शाह बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (1), मेहरुनिसा बनाम महाराष्ट्र राज्य (2), अशोक कुमार बनाम भारत संघ और अन्य (3), मो. हुसैन बनाम सचिव, महाराष्ट्र सरकार, गृह विभाग, मंत्रालय, बॉम्बे और अन्य (4), एम. अहमदकुट्टी बनाम भारत संघ और अन्य (5), हैदर बनाम भारत संघ और अन्य (6), और सरूप सिंह बनाम भारत संघ और अन्य (7)। याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के उपरोक्त तर्क को खण्डित करते हुए, भारत संघ के अतिरिक्त स्थायी वकील, श्री डी. डी. शर्मा, अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि संविधान के अनुच्छेद 22 (5) की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, हिरासत में लेने वाला प्राधिकारी बाध्य है, उन दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध कराने के लिए जिन पर उसने निवारक निरोध का आदेश पारित करने के लिए अपनी व्यक्तिपरक संतुष्टि के लिए भरोसा किया है यानी जिन दस्तावेजों पर उसने भरोसा किया और हिरासत के आधार बताए। आगे यह भी तर्क दिया गया है कि हिरासत में लेने वाला प्राधिकारी उन दस्तावेजों की प्रतियां प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है जिनका हिरासत के आधार में आकस्मिक रूप से उल्लेख किया गया है या जो प्रकृति में प्रासंगिक नहीं थे। यह भी आग्रह किया गया है कि याचिकाकर्ता यह बताने में सक्षम नहीं है कि क्या कथित दस्तावेजों की गैर-आपूर्ति के कारण उसके साथ कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न हुआ है, जिन पर न तो भरोसा किया गया था, न ही संदर्भित किया गया था, न ही विवादित हिरासत आदेश पारित करने के लिए प्रासंगिक था। विद्वान वकील ने अब्दुल सथार इब्राहिम माणिक बनाम भारत संघ और अन्य (8) में दिए गए सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है।

(10) मैंने बार द्वारा दिए गए संबंधित तर्कों पर विचार किया है और संबंधित रिकॉर्ड का भी अवलोकन किया है।

(1)ए.आई.आर. 1982 एस.सी. 8.
(2)ए.आई.आर. 1981 एस.सी. 1861.
(3)1988 (1) ऑल इंडिया क्रिमिनल एल.आर. एस.सी. 677.
(4)1982 क्रिमिनल. एल.जे. 1848.
(5)1990 (1) आर.सी.आर. 423 (एस.सी.)
(6)1989 (2) ऑल इंडिया क्रिमिनल एल.आर. 942.
(7)1992 (1) ऑल इंडिया क्रिमिनल एल.आर. 83.
(8)1992 एस.सी.सी. (क्रिमिनल.) 1

(11) अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि प्रभावी प्रतिनिधित्व करने के लिए, एक बंदी हिरासत के आधार से संबंधित जानकारी प्राप्त करने का हकदार है। जब हिरासत में लिए गए व्यक्ति को हिरासत के आधार की जानकारी

दी जाती है, तो वह प्रभावी प्रतिनिधित्व करने में सक्षम बनाने के लिए हिरासत के आधार में संदर्भित और भरोसा किए गए बयानों और दस्तावेजों की प्रतियां मांगने का हकदार है। श्रीमती इच्छु देवी चोरारिसी बनाम भारत संघ और अन्य(9),शीर्ष न्यायालय द्वारा इस प्रश्न का आधिकारिक उत्तर दिया गया है, निम्नानुसार: -

"अब यह स्पष्ट है कि जब अनुच्छेद 22 के खंड (5) और कोफेपोसा अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (3) में प्रावधान है कि हिरासत के आधार को पांच या पंद्रह दिनों के भीतर, जैसा भी मामला हो, हिरासत में लिए गए व्यक्ति को सूचित किया जाना चाहिए, अभिप्राय यह है कि हिरासत के सभी आधार बंदी को प्रदान किए जाने चाहिए। यदि हिरासत के आधार पर कोई दस्तावेज, बयान या अन्य सामग्री पर भरोसा किया जाता है, तो उन्हें बंदी को भी सूचित किया जाना चाहिए, क्योंकि हिरासत के आधार में शामिल होने के कारण, वे आधार का हिस्सा बनते हैं और इनको न बताए जाने पर , बंदी को दिए गए आधारों को अधूरा कहा जा सकता है। इसलिए हिरासत में लिए गए लोगों को केवल हिरासत के आधार के बारे में बताना पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि हिरासत के आधार पर जिन दस्तावेजों, बयानों और अन्य सामग्रियों पर भरोसा किया गया है, उनकी प्रतियां भी निर्धारित समय के भीतर बंदी को प्रदान की जानी चाहिए। अनुच्छेद 22 (6), (5) और , कोफेपोसा अधिनियम की धारा 3 उप-धारा (3) के अनुपालन के लिए, हिरासत में लिए गए लोगों को हिरासत के आधारों के बारे में सूचित करने का प्राथमिक उद्देश्य यह है कि बंदी को जल्द से जल्द अवसर पर, उसकी नजरबंदी के खिलाफ प्रतिनिधित्व करने में सक्षम बनाया जाए और यह देखना मुश्किल है कि जब तक वह ऐसा नहीं करता तब तक वह प्रभावी प्रतिनिधित्व कैसे कर सकता है। हिरासत के आधार पर जिन दस्तावेजों, बयानों और अन्य सामग्रियों पर भरोसा किया गया, उनकी प्रतियां भी प्रस्तुत की गईं। इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं है कि कोफेपोसा अधिनियम की धारा 3, उप-धारा (3) के साथ पढ़े गए अनुच्छेद 22 के खंड (5) के उचित निर्माण पर, खंड (6) के अधीन हिरासत की वैध निरंतरता के लिए यह आवश्यक है कि अनुच्छेद 22 के तहत हिरासत के आधार पर भरोसा किए गए दस्तावेजों, बयानों और अन्य सामग्रियों की प्रतियां हिरासत के आधार के साथ या किसी भी स्थिति में पांच दिनों के भीतर हिरासत में लिए गए व्यक्ति को प्रदान की जानी चाहिए और असाधारण परिस्थितियों में, और कारणों को हिरासत की तारीख से पांच दिनों के भीतर लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए। यदि धारा 3, उपधारा (3) के साथ पठित अनुच्छेद 22 के खंड (5) की यह आवश्यकता पूरी नहीं होती है, तो बंदी की निरंतर हिरासत अवैध और शून्य होगी।"

(12) इस मुद्दे पर विभिन्न उदाहरणों के साथ इस फैसले पर बोझ डाले बिना, यह बताया जा सकता है कि इस संबंध में केस कानून के सर्वेक्षण पर बॉम्बे हाई कोर्ट की एक डिवीजन बेंच ने मोहम्मद हुसैन के मामले (सुप्रा) ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 22 (5) के अनुसरण में बंदियों को दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्ति से संबंधित कानून को संक्षेप में प्रस्तुत किया है: -

“(i) उन सभी दस्तावेजों की प्रतियां, जिन पर भरोसा किया जाता है या जो हिरासत के आधार का आधार बनते हैं, हिरासत के आधार के साथ बंदी को प्रदान की जानी चाहिए;

(ii) वे दस्तावेज़ जिन पर भरोसा नहीं किया जाता है या जो हिरासत आदेश का आधार नहीं बनते हैं, लेकिन जिन्हें हिरासत के आधार में तथ्यों के वर्णन के रूप में केवल आकस्मिक रूप से या आकस्मिक रूप से संदर्भित किया गया है, बंदी को दी जाने की आवश्यकता नहीं है;

(iii) हालाँकि, ऐसे दस्तावेज़ भी, यदि बंदी इसके लिए अनुरोध करता है, तो उसे उसे प्रदान किया जाना चाहिए, क्योंकि वे उसके बचाव के लिए प्रासंगिक हैं या नहीं, इसका निर्णय बंदी को करना है, न कि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी को निर्णय करना है।"

(13) इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि अब्दुल सथार इब्राहिम माणिक के मामले (सुप्रा) में शीर्ष न्यायालय का निर्णय, जिस पर उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने भरोसा किया था, स्पष्ट है।

(9)ए.आई.आर. 1983 एस.सी. 1983।

(14) मेहरुनिसा के मामले में (सुप्रा) सुप्रीम कोर्ट के आधिपत्य ने यह स्पष्ट कर दिया था कि जब कोई बंदी कुछ दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्ति मांगता है, तो उसे इस आधार पर इनकार नहीं किया जा सकता है कि बंदी को पहले से ही दस्तावेज़ों की सामग्री के बारे में पता था। चूँकि बंदी के अनुरोध के बावजूद दस्तावेज़ उपलब्ध नहीं

कराए गए, इसलिए हिरासत रद्द कर दी गई। यहां यह भी स्पष्ट किया जा सकता है कि यह प्रश्न - कि क्या दस्तावेज, जिनकी प्रतियां याचिकाकर्ता द्वारा मांगी गई हैं, प्रासंगिक हैं या भौतिक हैं, हालांकि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा उन पर भरोसा नहीं किया गया है, इसका निर्णय याचिकाकर्ता द्वारा किया जाना है और हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा नहीं. यह प्रश्न हैदर के मामले (सुप्रा) में सीधे दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष उठा और निम्नलिखित उत्तर दिया गया: -

"महत्वपूर्ण सवाल यह है कि क्या हिरासत में लिए गए लोगों को ऐसे दस्तावेजों की प्रतियां प्रदान की जानी चाहिए या नहीं, जिन पर भरोसा नहीं किया जाता है, लेकिन जिस पर बंदी द्वारा मांगे जाने पर नजरबंदी के आधार पर एक आकस्मिक संदर्भ दिया गया है,इस मामले में कभी भी सुप्रीम कोर्ट में विचार नहीं किया गया।सर्वोच्च न्यायालय के किसी अन्य निर्णय का हवाला नहीं दिया गया है जहां ऐसे विशिष्ट प्रश्न पर विचार किया गया हो। हिरासत में लिए गए लोगों को मांगे जाने पर दस्तावेजों की प्रतियां प्रदान की जानी चाहिए, जिनमें हिरासत के आधार पर केवल आकस्मिक संदर्भ दिया गया है, क्योंकि हिरासत में लिए गए लोगों को उनके हिरासत आदेशों के खिलाफ प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए। यह बंदी पर निर्भर करता है कि वह अपना मन बनाए कि वह प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करते समय उक्त दस्तावेजों से क्या मदद प्राप्त कर सकता है। अदालत या हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी को इस सवाल पर ध्यान नहीं देना चाहिए कि क्या वास्तव में ऐसे दस्तावेज़ प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करने के लिए हिरासत में लिए गए व्यक्ति को कोई सामग्री प्रदान कर सकते हैं। इस संबंध में हिरासत में लिए गए व्यक्ति की मांग को पूरा करना हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी का कर्तव्य है और यह देखना बंदी पर निर्भर है कि वह हिरासत के आदेश के खिलाफ प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करने में ऐसे दस्तावेजों से कैसे बचाव कर सकता है। यह सच है कि संविधान के अनुच्छेद 22 में निहित प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों पर विचार करते समय अदालत को उचित प्रकाश में और व्यावहारिक सामान्य ज्ञान के दृष्टिकोण से इसका अर्थ लगाना चाहिए।"

(15) मौजूदा मामले के तथ्यों को देखते हुए, यह विवादित नहीं है कि याचिकाकर्ता की दुकान (व्यावसायिक परिसर) की 15 नवंबर, 1994 को अधिकारियों द्वारा तलाशी ली गई थी और वहां से कुछ दस्तावेज जब्त किए गए थे। याचिकाकर्ता को उसके अभ्यावेदन (अनुलग्नक पी.10) में लिखित अनुरोध के बावजूद न तो ऐसे दस्तावेजों की सूची और न ही उनकी प्रतियां प्रदान की गईं। इसी तरह, याचिकाकर्ता ने प्रदीप कुमार के पासपोर्ट की प्रति मांगी, जिनके बयान को अधिकारियों द्वारा दर्ज किया गया है, जिसे हिरासत के आदेश को पारित करने के लिए सामग्री का एक हिस्सा माना गया है। इसी प्रकार, जिस मारुति कार से याचिकाकर्ता और उसके दो सहयोगियों की उपस्थिति के अलावा 15 लाख की भारतीय मुद्रा बरामद होने का आरोप है, उसके पंजीकरण प्रमाण पत्र की प्रति याचिकाकर्ता के पूर्वोक्त प्रतिनिधित्व लिखित अनुरोध के बावजूद प्रदान नहीं की गई थी। याचिकाकर्ता के पासपोर्ट की प्रतिलिपि भी उसे प्रदान नहीं की गई थी, हालांकि याचिकाकर्ता का बयान था कि वह दुबई के कुलविंदर सिंह को तब से जानता था जब वह वहां गया था और जिसकी ओर से वह किसी प्रेम कुमार,दिल्ली के निवासी से पैसे इकट्ठा कर रहा था, इस बयान पर हिरासत प्राधिकारी द्वारा हिरासत के आदेश को पारित करने में भरोसा किया गया है।

(16) ऊपर चर्चा किए गए कानून के मद्देनजर, हिरासत में लेने वाला प्राधिकारी सभी दस्तावेजों की प्रतियां प्रदान करने के लिए बाध्य था क्योंकि याचिकाकर्ता ने अपने अभ्यावेदन (अनुलग्नक पी.10) में स्पष्ट रूप से इसका अनुरोध किया था। यह प्रश्न कि हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी द्वारा इन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था या नहीं या हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी के दृष्टिकोण से ये दस्तावेज़ प्रासंगिक थे या नहीं, अप्रासंगिक है। यह याचिकाकर्ता पर निर्भर करता है कि वह अपना मन बनाए कि वह प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करते समय उक्त दस्तावेजों से क्या मदद प्राप्त कर सकता है। अदालत या हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी को इस सवाल पर ध्यान नहीं देना चाहिए कि क्या वास्तव में ऐसे दस्तावेज़ प्रभावी या उद्देश्यपूर्ण प्रतिनिधित्व करने के लिए हिरासत में लिए गए व्यक्ति को कोई सामग्री प्रदान कर सकते हैं। इसलिए, अभ्यावेदन (अनुलग्नक पी.10) में मांगे गए दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्ति न करना, अपने आप में विवादित हिरासत आदेश की जड़ पर प्रहार करने के लिए पर्याप्त है। इस निष्कर्ष के मद्देनजर, मुझे याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए अन्य दो आधारों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

(17) उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, यह याचिका स्वीकार की जाती है। 7 फरवरी 1995 का हिरासत आदेश (अनुलग्नक पी.9) रद्द किया जाता है। यदी वह किसी अन्य मामले में नहीं चाहिये, तब याचिकाकर्ता को तुरंत रिहा कर दिया जाए।

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

रजत कुमार कनौजिया

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी,

फ़रीदाबाद,हरियाणा